गायत्री और यज्ञ–ज्ञान व विज्ञान

यज्ञ भारतीय संस्कृति का पिता है। यज्ञ द्वारा ही मनुष्य संस्कारित होकर शूद्र पशु से ब्राम्हण–देवत्व को प्राप्त होता है। जन्म से लेकर मृत्यु तक सभी सौलह संस्कारों में न्यूनाधिक प्रधानता यज्ञों की ही है। विवाह की यज्ञाग्नि वर–वधू की आत्मा को अटूट बंधन में बाँध देती है। इसी तरह कीर्तनों, व्रत–उपवासों तथा पर्व–त्यौहार आदि में भी यज्ञ किसी न किसी रुप में जुड़ा रहता है। होली तो यज्ञ का ही त्यौहार है। पूजा–पाठ आदि में जलने वाली धूपबत्ती, दीपक यज्ञ का लघु रुप है। प्राचीनकाल में भी तीर्थ वहीं बने है जहाँ बड़े–बड़े यज्ञ हुये हैं, जैसे :– प्रयाग। याग का अर्थ ही यज्ञ है। यज्ञ की बाहुलता के कारण ही इसे प्रयाग कहा गया है। काशी–वाराणसी के दशाश्वमेघ घाट पर भगवान राम द्वारा अश्वमेघ यज्ञ करवाये गये थे।

ब्रम्ह पुराण में वर्णन है कि, जंबू द्वीप में सत्पुरुषों द्वारा यज्ञ भगवान का यजन हुआ करता है। अतः यज्ञ पुरुष जंबू द्वीप में निवास करते हैं। ऋग्वेद के पहले मंत्र में ''अग्निमीड़े पुरोहित'' में ईश्वर की प्रतिमा के रुप में अग्नि को लिया गया है तथा ''अग्ने नय सुपथा राये'' मंत्र में यज्ञ भगवान से सही मार्ग पर ले जाने की प्रार्थना की गई है।

यज्ञ क्या है ? मोटे रुप में यज्ञ का तात्पर्य अग्निकुंड में मंत्रोच्चारण के साथ हवन सामग्री की आहुति डालना ही यज्ञ है। वस्तुतः यज्ञ शब्द संस्कृत की यज् धातु से बना है, जिसका अर्थ है देवपूजन संगतिकरण और दान।

आध्यात्मिक दृष्टिकोण से अर्थ

देवपूजन – का अर्थ है, ईश्वरीय शक्तियों की उपासना व आराधना।

संगतिकरण – का अर्थ है, उनकी समीपता और संगति।

दान– का अर्थ है, स्वयं की वस्तु देना।

व्यवहारिक दृष्टिकोण से अर्थ

देवपूजन– से तात्पर्य अपने से बड़ों का सम्मान करना है।

संगतिकरण– बराबरी वालों से संगति व मैत्री है।

दान– छोटे व कम साधन वालों की सहायता करना ही दान है।

इस तरह यज्ञ में 'इदं न मम' का त्यागभरा आदर्श प्रस्तुत है।

सृष्टिचक्र की धुरी यज्ञ :– सृष्टि की उत्पत्ति यज्ञ से हुई है। गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि, सृष्टि यज्ञ द्वारा ही उत्पन्न हुई है, यज्ञ से ही उसकी स्थिति है। इसी क्रम में समुद्र उदारतापूर्वक अपना जल बादलों को देता है और बादल सूर्य से ताप लेकर धरती पर बरसाते है। नदी, नाले तालाब इसी जल को ग्रहण करके मनुष्य, पशु–पक्षी व धरती की प्यास बुझाते हैं। गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं – प्रजापति ने यज्ञ को मनुष्य के जुड़वां भाई के रुप में पैदा किया है। दोनो एक–दूसरे का पोषण करते हुये फलें–फूलें। ऋग्वेद में कहा गया है कि, यज्ञानुष्ठान की महान उपासना बंद न करो जहाँ यज्ञ बंद हो जाते है वहाँ से सुख–शांति चली जाती है। (2/30/6) विश्वशांति का सर्वश्रेष्ठ आधार यज्ञ ही है। 10/66/2 यर्जुवेद कहता है – यह यज्ञाग्नि वृष्टि कराने वाली, धन देने वाली तथा पुष्टि, शक्ति बढ़ाने वाली है। (3/80)

रामायण में भी दशरथ के चारों पुत्र यज्ञ का ही प्रसाद थे। रावण व सभी असुर यज्ञ की शक्ति से परिचित थे। अतः वे सभी यज्ञ में विघ्न डालते थे। लक्ष्मण ने भी मेघनाथ द्वारा किया जा रहा तांत्रिक यज्ञ नष्ट किया था।

यज्ञ का अद्भुत विज्ञान :– यज्ञ में लगाया गया धन, सामग्री, समय व श्रम अनेक गुना होकर देवताओं के बैंक में जमा हो जाता है, जो अवसर आने पर ब्याज सहित मिल जाता है। विधि–विधान से किये गये यज्ञ दिव्य अस्त्र बन जाते हैं, जिनसे मनोवांछित वर्षा होती है। युद्व में विजय प्राप्त होती है। राजा परीक्षित को तक्षक सर्प ने काटकर जब मृत्यु की गोद में सुला दिया था, तब उनके पुत्र जन्मेजय ने बदला लेने के लिये 'सर्पयज्ञ' किया था, जिसकी शक्ति से सर्प खिंचकर कुण्ड में गिरने लगे थे। असुर गुरु शुक्राचार्य ने भी तांत्रिक यज्ञों से ही असुरों को शक्तिशाली बना दिया थाा। इस गूढ़पक्ष के अतिरिक्त भी यज्ञविद्या स्वयं में ठोस, भौतिक एवं आध्यात्मिक लाभ देने वाली है।

वायुमंडल की शुद्वि :– यज्ञ वायुमंडल को शुद्व बनाते है। मनुष्य के आवास स्थल पर दुर्गंध, सीलन, रोगाणु, जीवाणु किसी न किसी रुप में पनपते रहते हैं। गुड़–शक्कर जलाने से रोगाणुओं का नाश होता है। सूखी नीम की पत्तियों का धुँआ भी कीटाणु नाशक होता है।

वायुमंडल शोधन में यज्ञ की धुँआ व गर्मी दुर्गन्ध को हटाकर सुगंध फैलाती है। साथ ही हानिकारक कीटाणुओं को मारकर उपयोगी कृमिकीटों का पोषण करती है और यही धुँआ वर्षा के साथ विषाणुओं को नष्ट करता हुआ धरती को उर्वरा बनाता है, इस तरह वायुमंडल व धरती दोनो ही यज्ञ से शुद्व व उर्वरक बनते है।

प्रदूषण के इस युग में यज्ञ और अधिक उपयोगी हो जाते है। हम देखते है कि, वायु, जल व ध्वनि प्रदूषण ने जीवन दूभर कर दिया है। मशीनी सभ्यता ने प्रकृति, जल व मृदा को प्रदूषित कर दिया है। सरकार इसके लिये अरबों रुपयें खर्च कर रही है। इस विषय में यज्ञ ही सही समाधान प्रस्तुत करते हैं।

यज्ञ में जलाई गई औषधियाँ सुंगधित धुँए के रुप में विषैलें धुँए को निरस्त करती हैं और अपने औषधीय गुणों से मनुष्य, पशु–पक्षी व वनस्पतियों को लाभ देती हैं। यही धुँआ वर्षा के रुप में जल स्त्रोतों व जमीन को शुद्व कर उन्हें उचित पोषण देते हैं। ऐसा वैज्ञानिकों ने अपने शोध में पुष्टि की है।

यज्ञ द्वारा पर्जन्य वर्षा :– पर्जन्य का अर्थ है, अंतरिक्ष से प्राण वर्षा। जिस तरह जमीन में खाद डालने से उर्वरा शक्ति बढ़ती है, उसी तरह यज्ञ से वायुमंडल में प्राणशक्ति बढ़ती है। प्राणायाम को हम संकल्प बलपूर्वक खींचते है। प्रातःकाल टहलने पर यही प्राणतत्व हमें नई ताजगी, स्फूर्ति व शक्ति देता है।

हवन के साथ ऊर्जा एक क्षेत्र तक सीमित नहीं रहती जैसें पानी के बर्तन में तेल की बूंद डालने पर वह इसकी सतह पर फैल जाता है ठीक ऐसा ही फैलाव अंतरिक्ष में हवन से उत्पन्न ऊर्जा का होता है, यही ऊर्जा युक्त वर्षा ही मृदा, वृक्ष, अन्न, साग–सब्जी आदि में समा जाती है, जिससे गायें अधिक दूध देती हैं व इस फल साग–सब्जियों के सेवन से मनुष्य निरोगी व दीर्घजीवी बनता है।

यज्ञ द्वारा प्राकृतिक संतुलन :– मत्स्य पुराण में लिखा है कि, यज्ञ से देवता जीते हैं। देवताओं के अधीन सब प्रजा है और यज्ञ के अधीन सब देवता। यज्ञ ही भगवान विष्णु हैं जिनमें सब प्रतिष्ठित हैं। शतपथ ब्राम्हण में–यज्ञ को देवताओं का अन्न बताया गया है। गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं –

''देवान्भाव्य तानेन ते देवा भावयना वः''

अर्थात् तुम सब यज्ञीय कर्मो से देवताओं को प्रसन्न करो। देवता प्रसन्न होकर अपने अनुग्रह की वर्षा करेंगे। देवताओं की अनुकूलता का मनुष्य की सुख–शांति व प्रकृति संतुलन से गहरा रिश्ता है। प्रकृति देवशक्तियों की क्रीड़ाभूमि है। उनके अनुदानों से ही विश्व ब्रम्हांड की हलचलें सतुंलित हैं व व्यवस्थायें चल रही हैं।

यज्ञीय आदर्शों पर न चल पाने के कारण ही आज हमें प्राकृतिक प्रकोपों, भूकंप, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, प्रदूषण जैसे कष्ट झेलने पड़ रहे हैं। मनुष्य का आचरण–व्यवहार, पशु–पिशाच स्तर का हो गया है। चिंतन में घोर भ्रष्टता छाई हुई है।

यज्ञ द्वारा ऋण आयन में वृद्वि :– वैज्ञानिकों की शोध व निष्कर्षों से स्पष्ट हो चुका है कि, जिस वातावरण में ऋण आयनों की संख्या अधिक होती है, वहाँ स्वास्थ्य लाभ शीघ्र मिलता है। हमारे चारों तरफ फैले विशाल हवा के समुद्र में मात्र ऑक्सीजन का होना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि इसके धूलि के कणों में ऋण आवेश भी होना चाहिये। धन आवेशी कण युक्त आवोहवा स्वास्थ्य की दृष्टि से अनुकूल नहीं होती। भीड़–भाड़ व प्रदूषण युक्त शहरी, औद्योगिक क्षत्रों में वातावरण में धन आवेशी कणों की अधिकता के कारण ही स्वस्थ्य व्यक्ति भी बैचेनी व उद्दिग्नता अनुभव करते हैं, जबकि जल प्रपातों, समुद्री किनारों व पर्वतीय क्षेत्रों में ऋण आयन युक्त कण ही लाभ पहुंचाते है। इसी आधार पर आजकल ''आयनिक थैरेपी'' का प्रचलन चल रहा है। जहाँ नियमित रुप से यज्ञ होते हैं वहाँ ऋण आयन 200 से 800 आयन प्रति से.मी. की मात्रा देखी गई है।

यज्ञ एक सर्वांगीण चिकित्सा :– परम पूज्य गुरुदेव पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी ने इसे यज्ञोपैथी का नाम दिया है, जिसमें औषधि युक्त समिधायें व सामग्री सूक्ष्मीकरण के सिद्धांत पर कार्य करती हैं। ऐलोपैथी में ठोस गोली की जगह इंजेक्शन ज्यादा शीघ्र व गहरा प्रभाव डालता है। आयुर्वेद में सोने चांदी की भस्में रोगनाशक व शक्तिवर्धक बन जाती हैं। होम्योपैथी में पोटेन्सी में क्रमशः वृद्वि करते हुये मूल दवा को सूक्ष्मतम स्तर पर पहुंचा दिया जाता है, उसी तरह यज्ञाग्नि में अर्पित हवन सामग्री ठोस से वायुभूत होकर व अत्यंत शक्तिशाली रुप में उस वायुमंडल में सांस लेने वाले हर प्राणी को स्वास्थ्य लाभ प्रदान करती है।

मानसिक उपचार में यज्ञ :– शारीरिक रोगों से ज्यादा व्यापक क्षेत्र मानसिक रोगों का हैं। 90 प्रतिशत शरीरिक रोग की जड़ें मन में छिपी हुई है। वहम्, शंका, भय, भ्रम, असमंजस जैसे विकार मन को जकड़े हुये हैं। दरिद्रता, पिछड़ापन, उपेक्षा, तिरस्कार के मूल में मानसिक रुग्णता ही है। मानसिक रोगों के उपचार में बिजली के झटके व कार्बन–डायऑक्साइड जैसे आधे–अधूरे प्रयोग चल रहे हैं।

यज्ञ मानसिक रोगों का श्रेष्ठ उपचार है। यज्ञ द्वारा औषधि सर्वप्रथम मस्तिष्क पर प्रभाव डालते हुये फैफड़ों में पहुंचती है, जिससे आधा शीशी, जुकाम, मंदबुद्धि, सनक आदि रोग शमित होते चले जाते हैं।

यज्ञ चिकित्सा में मंत्रों की शक्ति का प्रभाव स्वर शास्त्र व ध्वनि विज्ञान के आधार पर कार्य करती है। पुल पर फौजियों को मार्च करते हुये जाना वर्जित होता है, क्योंकि कदमताल की ध्वनि पुल को ध्वस्त कर सकती है। शंख ध्वनि में इसके रास्ते आने वाले कीटाणु मर जाते है। मंत्रों का एक सूक्ष्म चैतन्य पक्ष भी होता है, जो उच्चारणकर्ता के शुद्व अन्तःकरण व संकल्प बल द्वारा जागृत होता है। शाप या वरदान इसी मंत्रशक्ति से फलीभूत होते हैं।

यज्ञीय ऊर्जा मंत्रों के प्रभाव को अधिक शक्तिशाली बनाती है। विज्ञान में ताप, ध्वनि व प्रकाश शक्ति की तीन इकाईयां हैं। इनमें ताप व प्रकाश की गति शब्द से अधिक है। यज्ञ में मंत्र की शब्दशक्ति के साथ ताप व प्रकाश को जोड़ा जाता है, इस तरह मंत्र शक्ति दूर–दूर पहुंचाने में यज्ञाग्नि ''एम्पलीफायर और ट्रांसमीटर'' का कार्य करती है, जो अपना प्रभाव उपस्थित जन समूह पर शब्दभेदी वाण की तरह छोड़ती है। इस तरह यज्ञ में मंत्रशक्ति, यज्ञ ऊर्जा व व्यक्तियों का संकल्प बल ऐसी भट्टी तैयार करते हैं, जो भाग ले रहे व्यक्तियों पर गहरा असर डालते हुये उनके कुसंस्कार, रोग, शोक व पाप–तापों को गलाती हुई उसे श्रेष्ठ बनाती है।

जहाँ पर्यावरण वायु, जल व प्रकृति के अन्य घटकों से मिलकर बनता है, वहीं वातावरण मनुष्य के श्रेष्ठ विचार, भाव व कृत्यों से बनता है। यदि वायुमंडल काया है तो वातावरण चेतना। आज वायुमंडल का संकट वातावरण रुपी चेतना की गड़बड़ी का ही दुष्परिणाम है। यज्ञ से अदृश्य जगत् में जो आध्यात्मिक तरंगे फैलती हैं, वे लोगों के मनों में वासना, स्वार्थपरता, द्वेष, अनीति, पाप जैसी अनेकों बुराईयों का शमन करती चली जाती है, जिससे अनेक समस्यायें स्वतः ही हल हो जाती है।

युग समस्याओं के समाधान में गायत्री यज्ञ :– यज्ञ भारतीय संस्कृति का पिता है, तो गायत्री माता है। एक ज्ञान का प्रतिनिधित्व करता है, तो दूसरा विज्ञान का। ज्ञान–विज्ञान के बल पर ही किसी राष्ट्र या व्यक्ति का सर्वांगीण विकास संभव है। गायत्री के 24 अक्षरों में मनुष्य की सद्बुद्धि जगाकर जीवन लक्ष्य दिखाने व पाने की प्रेरणायें भरी पड़ी हैं। गायत्री मंत्र के अक्षरों का गुंफन भी ध्वनि विज्ञान पर आधारित है। यह मंत्र उच्चारणकर्ता की समस्त शक्तियों व केन्द्रों को जाग्रत करने में सक्षम है।

आज युग समस्याओं के समाधान की जिस ज्ञान–विज्ञान की आवश्यकता है, वह सब गायत्री मंत्र में है। वस्तुतः यज्ञ अभियान द्वारा आधुनिक युग के विश्वामित्र युगऋषि पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य की प्रचण्ड तप साधना से उद्भूत है, जिन्होनें अपने भागीरथी पुरुषार्थ से गायत्री विद्या को जन–जन के बीच सुलभ बनाया।

♦♦♦♦♦

मंत्र विज्ञान–शक्ति व जाग्रति

डॉ. कुसुम गुप्ता, 21 गायत्री नगर, ग्वालियर

भारतीय संस्कृति के प्रेरक–प्रणेता ऋषियों की अगणित उपलब्धियों में मंत्र विद्या का मूल्य एवं महत्व अद्वितीय है। ऋषियों के अनुभूत कोष स्पष्ट करते हैं कि, विश्वव्यापी ब्रम्ह–चेतना के साथ मनुष्य का सघन व सुनिश्चित संबंध है, पर उसमें कषाय–कल्मष जैसे अवरोधों ने विक्षेप जैसी स्थिति पैदा कर दी है। बिजलीघर व कमरे के पंखे के बीच लगे तारों में यदि कहीं गड़बड़ी उत्पन्न हो जाये तो पंखा व बिजली अपने–अपने स्थान पर रहते हुये भी सन्नाटा छाया रहेगा। मंत्र साधना इन शिथिल संबंधों को पुनः प्रतिष्ठापित करने की सुनिश्चित पद्धति है। विश्व चेतना के साथ व्यक्ति को जोड़ने वाला राजमार्ग है।

मंत्र विद्या के प्रख्यात ग्रन्थ ''मंत्र महार्णव'' में इन दोनो तत्वों को ही स्वीकारा गया है। इसके अनुसार मंत्र का अर्थ है मनन, विज्ञान, विद्या व ज्ञान। मंत्र शक्ति से मनन का स्वभाव मिलता है, मनन कहते है बार–बार विचारने को जिस विचार को बार–बार मन में जमाने की कोशिश की जाती है वह मन का स्वभाव बन जाता है। अतः मंत्र शक्ति मन तद्नुरुप ढ़लता है साथ ही शक्ति का उद्भव होता है।

मंत्र विज्ञान में शब्दों का चयन ध्वनि विज्ञान के आधार पर किया जाता है। मंत्र विद्या के वैज्ञानिक (ऋषिगण) जानते थे कि, मुख से जो शब्द निकलते है उनका उच्चारण कंठ, तालू, मूर्धा, ओष्ठ, दंत व जिव्हामूल आदि मुख के विभिन्न अंगों द्वारा होता है। इस उच्चारण काल में मुख के जिन भागों से ध्वनि निकलती है, उन अंगों के नाड़ी, तंतु व ग्रंथियों पर उच्चारण का दबाव पड़ता है और उससे संबंधित शक्तियों का जागरण होने लगता है।

शब्दों का ध्वनि प्रवाह कोई तुच्छ चीज नहीं है। शब्द को ब्रम्ह कहा गया है, जिस तरह घड़ी का लटकन घंटा पेंडुलम झूमता हुआ घड़ी के पुर्जो में चाल पैदा करता है उसी तरह ऊँकार ध्वनि प्रवाह सृष्टि को चलाने वाली गति पैदा करता है। आगे चलकर इसकी तीन प्रधान धारायें सत, रज व तम बहती हैं। ये तीनों धारायें अपने–अपने क्षेत्र में सृष्टि का संचालन करती हैं। मंत्रों की शब्दावली भी ऐसे चुने हुये शब्दों से निर्मित है, जिसके कारण शरीर के विभिन्न भागों में अवस्थित यौगिक लघु चक्र जाग्रत हो जाते हैं व मनुष्य योगी बनता है। जिस तरह दीपक राग से बुझे दीपक जल उठते हैं। वेणुनाद सुनकर सर्प लटलटाने लगते है। मृग सुधि भूल जाते है। सैनिकों के कदमताल से पुल टूटने की संभावना बनी रहती है। उसी तरह मंत्र भी अपनी शक्ति से संबंधित शक्ति देवता को साधक की ओर आकर्षित करते हैं।

मंत्र प्रक्रियाओं की अनेकानेक विशेषताओं में सर्वाधिक महत्ता उसके स्फोट में है। स्फोट का मतलब है, ध्वनि विशेष का ईथर तत्व में होने वाला असाधारण प्रभाव। अणु विस्फोट से उत्पन्न भयावह शक्ति की जानकारी हम सभी को है। वर्तमान बोलचाल में विस्फोट शब्द जिस अर्थ में प्रयुक्त होता है लगभग उसी में संस्कृत में स्फोट का प्रयोग किया जाता है। शब्द स्फोट से ऐसी ध्वनि तरंगे उत्पन्न होती हैं जो कानों की श्रवण शक्ति से परे हैं। शब्द आकाश का विषय है। अतः मांत्रिक जब मंत्र का लयबद्व प्रयोग करता है तब मंत्रों का संगीत प्रवाह ईथर तत्व में फैलता है और कुछ ही क्षणों में विश्व ब्रम्हांड की परिक्रमा करके वापिस आते–आते स्वजातीय तत्वों की सेना ले आता है, जो साधक की अभीष्ट उद्देश्य की पूर्ति में सहायक होते है।

ईथर तत्व में शब्द प्रवाह का संचरण रेडियों द्वारा अनुभव किया जा सकता है पर उसे देखना संभव नहीं। उसी तरह मंत्र में उच्चारित शब्दावली मंत्र की मूल शक्ति नहीं बल्कि अंतरंग व अंतरिक्ष में भरी अगणित चेतना शक्ति को सजग करने का उपकरण मात्र है। मंत्र दृष्टाओं ने मंत्रों में शब्दों का चयन यह ध्यान रखते हुये किया था कि, उनका उच्चारण जपकर्ता के वहिरंग व अंतरंग पर क्या प्रभाव डालता है।

मंत्र जप की प्रक्रिया भीतर व बाहर दोनो जगह होती है। जिस तरह आग जहाँ लगती है उस स्थान को व समीपवर्ती वायुमंडल को गर्म करती है उसी तरह शरीर में जहाँ भी चक्र व उपत्किाओं का समूह है वहाँ एक विशिष्ट स्तर की शक्ति प्रवाहित होने लगती है और साधक उससे लाभान्वित होता है। वैज्ञानिक, मांत्रिक व तांत्रिक तीनों ही अपने–अपने क्षेत्र में भिन्न–भिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिये सुव्यवस्थित ऊर्जा ढूंढ़ते हैं।

वैज्ञानिक भौतिक जगत की ऊर्जा को व्यवस्थित कर संसाधनों की वृद्वि करता है तो योगी मांत्रिक आध्यात्मिक जगत की ऊर्जा पैदा कर अपने लक्ष्य की पूर्ति करते हैं और तांत्रिक भौतिकीगत ऊर्जा पैदा करता है। हमारे ऋषियों ने ऊर्जा के विभिन्न स्तरों का पता लगाकर सूक्ष्म जगत में अनुसंधान कर मंत्रों के देवताओं की प्रकृति के अनुसार चुना।

जिस तरह यंत्र को चलाने के लिये ईधन की आवश्यकता होती है, उसी तरह मंत्रों की सफलता भी आध्यात्मिक ऊर्जा व परिष्कृत व्यक्तित्व पर निर्भर करती है। जैसे जमा हुआ मोम तेल में नहीं मिलता किंतु अग्नि में पिघला देने से वह तेल में घुलमिल जाता है, उसी तरह सूक्ष्म शक्तियां हरेक को प्राप्त नहीं होती किंतु साधना द्वारा अपने अन्तः स्थल को पिघला देने पर ये दुर्लभ शक्तियां आत्मसात् हो जाती हैं। इस तरह ध्वनि की शक्ति बीज मंत्रों का कम्पन व साधक की संकल्प शक्ति का समुच्चय ही मंत्र विज्ञान का आधार बना।

मंत्र विनियोग के 5 अंग है :–

1. ऋषि। 2. छन्द। 3. देवता। 4.बीज व 5. तत्व।

इन्हीं तत्व का अर्थ है ऐसी मार्गदर्शक सत्ता जिसे उस मंत्र में सिद्वि हो। जिस तरह संगीत, सर्जरी, नौकायान आदि विद्या बिना गुरु की सहायता से नहीं सीखी जा सकती, उसी तरह मंत्र सिद्वि के लिये भी गुरु की आवश्यकता अनिवार्य है। गुरु ही मंत्र सिद्वि में शिष्य की मनोभूमि, उसमें होने वाले उतार–चढ़ाव को ध्यान में रखकर मंत्र–सिद्वि में शिष्य की सहायता करता है।

छन्द का अर्थ है, लय। ध्वनि तरंगों का कम्पन लय पर निर्भर है। मंत्र का तीसरा चरण देवता अर्थात् चेतना सागर से अपने अभीष्ट शक्ति प्रवाह का चयन। जिस तरह आकाश में एक समय में ही अनेक रेडियो स्टेशन बोलते है। हरेक की फ्रीक्वेन्सी अलग–अलग होती है। ऐसा न हो तो ब्राडकास्ट किये गये सभी शब्द मिलकर एक हो जाते और हम मनचाहा कार्यक्रम नहीं सुन पाते। ठीक इसी तरह मंत्रों के माध्यम से हम अभीष्ट प्रयोजन हेतु संबंधित देवता के मंत्र का प्रयोग करते हैं और लक्ष्य की प्राप्ति करते हैं।

बीज से अर्थ है, उद्गम। मंत्र को किस विधि से प्रभावित करें इसकी जानकारी बीज विज्ञान देता है। इसे किसी मंत्र में शक्ति भरने वाले इंजेक्शन कह सकते है। हीं, श्रीं, क्लीं, ऐं आदि बीज मंत्रों में अर्थ से नहीं ध्वनि से ही प्रयोजन सिद्व होते हैं।

जिस तरह सूर्य के सात रंगों में से हम जिसे चाहें उसे रंगीन बोतलों के माध्यम से पकड़कर लाभान्वित होते हैं। हंस दूध पीता है और पानी छोड़ देता है, उसी तरह मंत्र भी संबंधित देवता (शक्ति) को अपनी ओर आकर्षित करता व शेष को छोड़ देता है। देवता की स्थापना, पूजन, कीर्तन, स्तवन आदि क्रियाओं का यही प्रयोजन होता है। प्राचीन काल में योगी, ऋषि व तत्वदर्शियों ने मंत्रवल से ही पृथ्वी देवलोक व ब्रम्हांड की अनंत शक्तियों पर विजय पाई थी। मंत्र शक्ति के प्रभाव से वे इतने समर्थ हो गये थे कि, इच्छानुसार किसी भी पदार्थ का हस्तान्तरण करना, शाप या वरदान देना, शब्दों के कम्पन से विष निवारण, अदृश्य शक्तियों का आकर्षण, मारण, मोहन, उच्चारण आदि सफलतापूर्वक करते रहे। महाभारत काल में मंत्र प्रेरित शस्त्रों की मार होती थी, उससे परमाणु बमों से भी भयंकर ऊर्जा उत्पन्न होती थी व उस शक्ति से सैनिकों के समूह के समूह नष्ट हो जाते थे। हजारों की भीड़ में से छिपे दुश्मन को अकेले मारा जा सकता था, उस शब्द विज्ञान की थोड़ी सी जानकारी ही आज का भौतिक जगत् जान पाया है।

हमारे वेद मंत्र विज्ञान ही हैं, जिसमें विराट् ब्रम्ह की अलौकिक सूक्ष्म शक्ति व चेतना से संबंध स्थापित करने के गूढ़ रहस्य दिये गये हैं।

वस्तुतः स्थूल वस्तु की सहायता से स्थूल को पकड़ने की विद्या सब जानते हैं जैसे :– हाथ से कलम पकड़ना, चिमटे से अग्नि पकड़ना, पर अदृश्य वस्तु को पकड़कर उससे लाभ उठाने की कला विरले ही जानते है। जिस तरह वैज्ञानिक आविष्कार के पूर्व बिजली, गैस, भाप व परमाणु आदि थे, पर लोग उन्हें पकड़ना नहीं जानते थे। अतः उससे प्राप्त लाभों से बंचित थे। हमारे वैज्ञानिकों ने कोई नई चीज का आविष्कार नहीं किया बल्कि उन चीजों से लाभ उठाने की विधि विकसित की है। इसी तरह दैवीय शक्ति यंत्रों की पकड़ के बाहर है, हमारे ऋषियों ने मंत्रों द्वारा उन्हें पकड़ा व लाभ उठाया है।

मानव के सर्वांगीण कल्याण हेतु ऋषियों ने गायत्री मंत्र को महामंत्र बताया है। सारे मंत्र इसके अधीन है। शब्दों की दृष्टि से इस मंत्र का भावार्थ सरल है, ऊँ परमात्मा का स्वयं भू स्वउच्चारित नाम। गायत्री मंत्र में भौतिक शरीर, सूक्ष्म शरीर व कारण शरीर को श्रेष्ठ बनाने हेतु सविता देवता से सद्बुद्वि देने की कामना की गई है। ऋषियों ने इसे तारक मंत्र बताया है और कहा है जो इसकी शरण पकड़ेगा उसे भवबंधन से, भवसागर से उबरते देर नहीं लगेगी। यह महाशक्ति उसे डूबने से बचा लेगी। शंख स्मृति में उल्लेख है :–

गय या परमं नास्ति दिविचेत च पावनम्
हस्त त्राणं प्रदा देवी पततां नरर्वीणवे ।।

अर्थात् नरक रुपी समुद्र में गिरते हुये को हाथ पकड़कर बचाने वाली गायत्री के समान पवित्र करने वाली वस्तु इस पृथ्वी तथा स्वर्ग में कोई नहीं है। गायत्री मंत्र के शब्दार्थ से भी प्रकट है गय। अर्थात् प्राण और ''त्री'' अर्थात् त्राण करने वाली। जो प्राणों का परित्राण, उद्वार व संरक्षण करे वह गायत्री।

गायत्री महामंत्र में शब्दों का गुंथन कुछ इस प्रकार वैज्ञानिक विधि से हुआ है कि, उसके जप से साधक की अन्तः चेतना में सविता देवता सूर्य तेज भर्ग के समाविष्ट होने से प्रसुप्त सूक्ष्म संस्थानों में जागृति आती है, जिससे सभी कषाय–कल्मष धुलते चले जाते हैं। सौर चेतना का अविरल प्राण–प्रवाह होने लगता है और देवी वरदानों की भांति सद्बुद्वि प्राप्त होती है। गायत्री मंत्र के साधक अनुभव करते हैं कि, कोई अज्ञात शक्ति रहस्यमय ढंग से उनके मनः क्षेत्र में नवीन ज्ञान, प्रकाश, उत्साह आश्चर्यजनक रीति से बढ़ा रही है। गायत्री साधना से तत्काल आत्मबल प्राप्त होता है।

निष्कर्षतः मंत्र अदृश्य शक्तियों को पकड़कर लाभ उठाने की प्रक्रिया है, जिससे जीवन को विभिन्न प्रयोजन सिद्व होते हैं। इन्हें साधक, श्रद्धा व विश्वास रुपी हाथों से ही ग्रहण कर सकता है।

♦ ♦ ♦ ♦ ♦

संकल्प–शक्ति

डॉ. कुसुम गुप्ता, 21 गायत्री नगर, ग्वालियर

इस सृष्टि की रचना जिसने की है, उसी ने इसका संतुलन बनाये रखने की जिम्मेदारी भी उठा रखी है। वह करुणानिधान बनकर महान आत्माओं को सहयोग देने के लिये सदैव आतुर रहते हैं। उसी तरह दुष्कृत्यों व दुष्प्रवृतियों को मिटाने के लिये पूरी तरह तैयार रहते हैं। ''परित्राणाय साधुनाम्'' के साथ ही ''विनाशाय च दुष्कृतानां'' की घोषणा भी उन्हीं के द्वारा की गई है।

जिस प्रकार शरीर को अच्छा भोजन व वस्त्र तो दिया जाये, किंतु मलमूत्र निष्कासन का प्रयास न किया जाये तो उसका स्वस्थ्य व आरोग्य रह पाना कठिन है, उसी प्रकार स्वस्थ्य सामाजिक व्यवस्था के लिये भी दोनो क्रम चाहिये। माली पोधों को खाद–पानी देकर बढ़ाता है वहीं अवांछनीय झाड़–झखोड़ों को उखाड़ता भी है। इसी प्रकार समाज में भी अनुचित परम्पराओं का उन्मूलन व श्रेष्ठ परम्पराओं का निर्माण आवश्यक है।

भगवान सृष्टि के संतुलन के लिये जागृत आत्माओं का उपयोग करते हैं। ऐसे व्यक्तियों का चिंतन व कार्यशैली सामान्य लोगों से भिन्न हो जाती है। हेय स्तर के नर–वानर तो लोभ–मोह की चक्की में पिसते रहते हैं, किंतु ईश्वर के प्रतिनिधि एक ही बात सोचते हैं कि, लोकहित को किस तरह पूरा किया जावे। पेट व प्रजनन का प्रश्न नर कीटकों के लिये सब कुछ हो सकता है, किंतु महान आत्मायें उसे बाल–कौतुक से ज्यादा नहीं मानती। वे अपनी जीवन सम्पदा ऐसे कार्यो में नियोजित करते हैं कि, उन्हें आत्म–संतोष, जन–कल्याण व ईश्वरीय अनुग्रह सभी कुछ मिलता रहे। इसे अपनाने के लिये उन्हें अपने पिछले कुसंस्कारों व अभ्यासों से लोहा लेना पड़ता है। अपने सत्संकल्प को प्रखर बनाना होता है। अपने व्यक्तित्व को प्रखर बनाये बिना जन–मानस में श्रद्धा का संचार नहीं हो सकता।

हर मनुष्य के पास वह कान हैं जो युग की पुकार सुन सकें व जीवन को धन्य बनाने वाले अवसरों को पहचान सके। चाहे वह कृष्ण द्वारा रचित महाभारत हो या स्वतंत्रता आन्दोलन के लिये क्रांतिकारियों की मांग या युग परिवर्तन के लिये प्रज्ञा पुत्रों का आव्हान। इसे सुनते तो सभी हैं, किंतु यश केवल उन्हें ही मिलता है जो संकल्प पूर्वक उसमें अपनी भूमिका चुन लेते हैं। यदि संकल्प की खेती करना आ जाये तो उसमें से सिद्धि–विभूति उगाई जा सकती है। अनसुईया ने अपने तपोबल से ही ब्रम्हा, विष्णु व महेश को बालक बना दिया था, इससे सिद्व होता है कि, वरिष्ठता देवताओं की नहीं आत्मबल की ही है।

मानव मन बड़ा ही शक्ति सम्पन्न है, वह जहाँ भी लग पड़े कमाल कर दिखाता है। यदि उसे संकल्प पूर्वक उच्च आदर्शो की दिशा में मोड़ सकें तो जीवन धन्य हो जायेगा। लोग सोचते हैं कि, सत्यवादिता व आदर्श मात्र सिद्धांतों का नाम है। ये मात्र कहे जातें हैं, किये नहीं जाते। आदर्शो के मार्ग में कठिनाईयां आती हैं, अतः उनसे बचकर ही रहा जाये। यह भी मात्र एक भ्रम है। कठिनाईयों के भय से श्रेष्ठ मार्ग छोड़कर कोई कष्ट से बचा नहीं है। इस जीवन की बनावट ही ऐसी है कि, किसी न किसी रुप में कठिनाईयां तो आती ही रहती हैं। संघर्ष तो जीवन का अंग है। आदर्शवादी मार्ग छोड़कर कोई कष्ट कंटकों से बचा हो ऐसा कोई भी उदाहरण नहीं है। भारतीय संस्कृति अपनों से बड़ों व हितैषियों की बात मानने की सलाह अवश्य देती है, किंतु वे प्रगति के मार्ग में बाधक बने तब उनका बिरोध करने का आदेश भी देती है।

ऐसीं जागरुकता जहाँ कहीं भी होगी, अनीति पनपने नहीं पायेगी। अनाचार से लोहा लेने में साधनों की अपेक्षा दृढ़ संकल्प–बल की ही अधिक आवश्यकता होती है। साधनहीन जटायु पराक्रमी रावण से लोहा लेता हुआ शहीद हो गया। सेना समेत भरत को आते देख केवट प्रतिरोध की तैयार करने लगा। राजा राममोहन राय ने अपनी भाभी को जबरन सती कराते हुये देख तुरंत सती प्रथा बन्द कराने का संकल्प ले लिया था, जिसमें उन्हें सफलता भी मिली।

मिलावटी खाद्य पदार्थ खाकर हम बीमार पड़े रहे, मिलावटी दवाईयां रोज सैकड़ों मासूमों की जान लेती रही, दहेज की बलिवेदी पर निरीह व निरपराध कन्यायें रोज चढ़ती रहीं। विवाहों के अपव्यय हमें आर्थिक रुप से दबोचते रहे। असामाजिक तत्व नाना प्रकार के भय दिखाकर मनमानी करते रहे, किंतु हम भाग्य की गोली खाकर सो जाने के अतिरिक्त कुछ न कर सके। धर्म के धंधाखोर लोग हमारी संस्कृति व देवताओं का अपमान करते रहे और हमारे मुर्दा दिलों में कसक भी पैदा न हो सकी। सीता को अपमानित देख बूढ़े जटायु का खून उबाल खा सकता है, किंतु हमारे रगो का खून जैसे पानी हो गया है, जो माँ, बहनों, बेटियों की खुलेआम इज्जत लूटते देख हम उन नाचीज छोकरों को सबक भी नहीं सिखा सकते।

आखिर यह सब क्यों ? उत्तर एक ही है, हमने आदर्श निष्ठा की बातें तो बहुत की किंतु उन पर संकल्प शीलता का पानी नहीं चढ़ाया। जब–जब नियम पालन की बात आई हमने मन की दुर्बलता पर पर्दा डालने के लिये तमाम तर्क खोज डाले, इससे क्या फायदा ? कहकर अपना पल्ला बचाते रहे। वस्तुतः हमने व्रतशीलता का वरण नहीं किया तो उत्कृष्टता भी हमारा वरण न कर सकी।

वास्तव में व्रतशीलता मनुष्य के अंदर दृढ़ता उत्पन्न करती है, तब उसकी सोई शक्तियां जागृत हो जाती है और मनुष्य दृढ़तापूर्वक संकल्प पूर्ण करता, शंखनाद करता चला जाता है। शक्तियां व सिद्धियां व्रतशीलता को ही प्राप्त होती है। चिन्ह पूजा से व्यर्थ ही समय, शक्ति व ज्ञान का ह्रास होता है, अतः निराशा ही हाथ लगती है। जब तक हम लम्बे समय तक अपने अंदर बाहर की रुकावटों को संकल्प पूर्वक रोक नहीं देते तब तक दुर्लभ कहे जाने वाले कार्य व सिद्धियां हमारी झोली में नहीं डाली जा सकेंगी। संकल्पों को विस्मरण नहीं होने देना चाहिये। इसके लिये चाणक्य की चोटी की गांठ व द्रोपदी के खुले केश की भांति दूसरा मार्ग भी हम अपना सकते है। परशुराम ने भी अपने कुल्हाड़े का प्रयोग लम्बे समय तक अनीति के विरोध में किया था व संकल्प पूर्ण होते ही अपने उसी पराक्रम को, वृक्षारोपण की दिशा में बदल दिया।

अतः जागृत आत्माओं से पुनः आव्हान है कि, वे व्रतशीलता का पालन करते हुये आगे बढ़े। स्वयं प्राणवान बने व जागृति का शंखनाद करते हुये देवभूमि, ऋषिभूमि भारत को एक बार पुनः ''जगतगुरु'' व सोने की चिड़िया बना दें।

♦ ♦ ♦ ♦ ♦

गायत्री का वैज्ञानिक दर्शन

डॉ. कुसुम गुप्ता, 21 गायत्री नगर, ग्वालियर

ऊँ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

भावार्थ :उस प्राण स्वरुप दुख नाशक सुख स्वरुप श्रेष्ठ तेजस्वी पाप नाशक देव स्वरुप परमात्मा को हम अन्तरात्मा में धारण करें। वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करें।

गायत्री महाशक्ति का आविर्भाव ज्येष्ठ माह की शुक्ल पक्ष की दशमी की मध्यरात्रि में हुआ है। अतः इसका उपवास पुण्य दूसरे दिन एकादशी को माना जाता है। गायत्री महामंत्र का वर्णन करते हुये ऋषियों ने इसे तारक मंत्र बताया है और कहा है जो इसकी शरण पकड़ेगा उसे भवबंधन से, भवसागर से उबरते देर नहीं लगेगी। यह महाशक्ति उसे डूबने से बचा लेगी। शंख स्मृति में उल्लेख है :–

गय या परमं नास्ति दिविचेत च पावनम्
हस्त त्राणं प्रदा देवी पततां नरर्वीणवे ।।

अर्थात् नरक रुपी समुद्र में गिरते हुये को हाथ पकड़कर बचाने वाली गायत्री के समान पवित्र करने वाली वस्तु इस पृथ्वी तथा स्वर्ग में कोई नहीं है। गायत्री मंत्र के शब्दार्थ से भी प्रकट है गय। अर्थात् प्राण और ''त्री'' अर्थात् त्राण करने वाली। जो प्राणों का परित्राण, उद्वार व संरक्षण करे वह गायत्री। मंत्र शब्द का अर्थ है, मनन। मंत्र के शब्दार्थ पर महार्थ मंजरी में वक्तव्य आया है।

''मनन त्राण धर्माणों मंत्रः''। अर्थात् मनन और त्राण मंत्र के ये दो धर्म है।

गायत्री महामंत्र में शब्दों का गुंथन कुछ इस प्रकार वैज्ञानिक विधि से हुआ है कि, उसके जप से साधक की अन्तः चेतना में सविता देवता सूर्य तेज भर्ग के समाविष्ट होने से प्रसुप्त सूक्ष्म संस्थानों में जागृति आती है, जिससे सभी कषाय–कल्मष धुलते चले जाते हैं। सौर चेतना का अविरल प्राण–प्रवाह होने लगता है और देवी वरदानों की भांति सद्बुद्वि प्राप्त होती है। गायत्री मंत्र के साधक अनुभव करते हैं कि, कोई अज्ञात शक्ति रहस्यमय ढंग से उनके मनः क्षेत्र में नवीन ज्ञान, प्रकाश, उत्साह आश्चर्यजनक रीति से बढ़ा रही है। गायत्री साधना से तत्काल आत्मबल प्राप्त होता है।

मंत्र विद्या के वैज्ञानिक (ऋषिगण) जानते थे कि, मुख से जो शब्द निकलते है उनका उच्चारण कंठ, तालू, मूर्धा, ओष्ठ, दंत व जिव्हामूल आदि मुख के विभिन्न अंगों द्वारा होता है। इस उच्चारण काल में मुख के जिन भागों से ध्वनि निकलती है, उन अंगों के नाड़ी, तंतु व ग्रंथियों पर उच्चारण का दबाव पड़ता है। जिन लोगों की कोई सूक्ष्म ग्रंथि कमजोर या नष्ट होती है, तो उनके मुख से कुछ खास शब्द रुक–रुक कर

निकलते है, जिसे तुतलाना या हकलाना कहते हैं। इसी आधार पर ऋषि–मनीषियों ने इनमें से मात्र 24 ऐसी ग्रंथियां खोज निकाली है, जिनके अंदर असीम शक्तियां सुप्त अवस्था में विद्यमान है। गायत्री मंत्र से इन शक्तियों को जागृत कर लिया जाये तो मानव महामानव बन सकता है। इन ग्रंथियों के जागृत होने पर ये सद्‌बुद्धि प्रकाशक शक्तियों को जागृत करती हैं।

शब्दों का ध्वनि प्रवाह कोई तुच्छ चीज नहीं है। शब्द विद्या के आचार्य जानते है कि, शब्द में कितनी शक्ति है और उसके क्या–क्या परिणाम उत्पन्न हो सकते है। शब्द को ब्रम्ह कहा गया है, जिस तरह घड़ी का लटकन घंटा पेंडुलम झूमता हुआ घड़ी के पुर्जो में चाल पैदा करता है उसी तरह ऊँकार ध्वनि प्रवाह सृष्टि को चलाने वाली गति पैदा करता है। आगे चलकर इसकी तीन प्रधान धारायें सत, रज व तम बहती हैं। ये तीनों धारायें अपने–अपने क्षेत्र में सृष्टि का संचालन करती हैं। गायत्री की शब्दावली भी ऐसे चुने श्रृंखलाबद्ध शब्दों से बनाई गई है, जो क्रम और गुम्फन की विशेषता के कारण अपने ढंग का एक अद्‌भुत शक्ति प्रवाह उत्पन्न करती है, जिसके कारण शरीर के विभिन्न भागों में अवस्थित यौगिक लघु चक्र जाग्रत होते हैं और मनुष्य योगी बनता है। दीपक राग गाने से बुझे दीपक जल उठते हैं। वेणुनाद सुनकर सर्प लहराने लगते है। मृग सुधि भूल जाते है। सैनिकों के कदम मिलाकर चलने की शब्द ध्वनि लोहे के पुल तक गिर सकते हैं। अतः पुल पार करते समय सेना को कदम न मिलाकर चलने की हिदायत दी जाती है। गायत्री मंत्र द्वारा भी इसी तरह शक्ति का आविर्भाव होता है। मंत्रोच्चारण में मुख के जो अंग क्रियाशील होते हैं उन भागों में नाड़ी तंतु कुछ विशेष ग्रंथियों को गुद्‌गुदाते हैं, उनमें स्फुरण होने से एक वैदिक छन्द का क्रमवद्ध योगिक संगीत प्रवाह ईथर तत्व में फैलता है और कुछ क्षणों में विश्व परिक्रमा करके वापिस आते–आते एक स्वजातीय तत्वों की सेना ले आता है, जो अभीष्ट उद्‌देश्य की पूर्ति में सहायक होते है।

गायत्री एक विश्वव्यापी तत्व है, जिसे हीं–बुद्धि, श्री–समृद्धि और क्लीं–शक्ति इन गुणात्मक विशेषताओं का उद्‌गम कहा जा सकता है। चूंकि ये तीनों तत्व मनुष्य के लिये अत्यंत उपयोगी है एवं आवश्यक हैं। अतः ऋषियों ने गायत्री उपासना मानव के लिये रोटी, कपड़ा और मकान की भांति अनिवार्य बताई है। विश्वव्यापिनी गायत्री जब आकाश शब्द से टकराकर तद्व तन्मात्रा में प्रतिध्वनित होती है, उस समय 24 अक्षरों वाले गायंत्री मंत्र के समान ध्वनि उत्पन्न होती हैं। हम अपने स्थूल कानों से उसे नहीं सुन सकते। लेकिन ऋषियों ने उसे अपनी दिव्य कर्णेन्द्रियों से सुना और उस स्वर लहरी को गायत्री के 24 अक्षरों के रुप में पकड़ लिया फिर मानव को गायत्री मंत्र का जप करने हेतु प्रेरित किया, ताकि उसके लाभों को लिया जा सके।

स्थूल वस्तु की सहायता से स्थूल को पकड़ने की विद्या सब जानते हैं जैसे :– हाथ से कलम पकड़ना, चिमटे से अग्नि पकड़ना पर अदृश्य वस्तु को पकड़कर उससे लाभ उठाने की कला विरले ही जानते है। जिस तरह वैज्ञानिक आविष्कार के पूर्व बिजली, गैस, भाप व परमाणु आदि थे, पर लोग उन्हें पकड़ना नहीं जानते थे अतः उससे प्राप्त लाभों से बंचित थे। हमारे वैज्ञानिकों ने कोई नई चीज का आविष्कार नहीं किया बल्कि उन चीजों से लाभ उठाने की विधि विकसित की है। इसी तरह दैवी शक्ति यंत्रों की पकड़ के बाहर है, हमारे ऋषियों ने मंत्रों द्वारा उन्हें पकड़ा व लाभ उठाया है।

जमा हुआ मोम तेल में नहीं मिलता किंतु अग्नि में पिघला देने से वह तेल में घुलमिल जाता है, उसी तरह सूक्ष्म शक्तियां हरेक को प्राप्त नहीं होती किंतु साधना द्वारा अपने अन्तः स्थल को पिघला देने पर ये दुर्लभ शक्तियां आत्मसात् हो जाती हैं।

मनुष्य का शरीर और मन पंच तत्वों से बना हुआ है। पंच तत्वों से गायत्री शक्ति का सम्मिलन होते समय सूक्ष्म जगत में जो प्रतिक्रिया होती है, वैसी ही मानसिक प्रतिक्रिया यदि हम अपने मनः क्षेत्र में उत्पन्न करें तो हम आसानी से गायत्री तक पहुंच सकते है।

गायत्री मंत्र को और अधिक सूक्ष्म बनाने वाला कारण है, साधक की श्रद्धा और विश्वास। रामायण में तुलसीदास जी ने ''भवानीशंकरौ बिन्दे श्रद्धा विश्वास रुपणी'' गाते हुये श्रद्धा और विश्वास को भवानी शंकर की उपमा दी है। श्रद्धा और विश्वास के कारण मानव अन्तःकरण की बिखरी हुई शक्तियां एक स्थान पर केन्द्रित हो जाती हैं। इस एकीकरण को अभीष्ट उद्देश्य की पूर्ति में दौड़ाया जा सकता है।

जैसा कि हिप्नोटिज्म में किया जाता है। प्राचीनकाल में ऋषि मुनि योगी, तपस्वी गायत्री को माध्यम बनाकर योग साधना करते थे। गायत्री को भूलोक की कामधेनु कहा जाता है, क्योंकि इसी उपासना से सभी तृष्णायें शांत हो जाती हैं। गायत्री को ब्रम्हास्त्र कहा गया है। यह लोहे से बनी प्राणहरण क्षमता रखने वाली कोई साधारण तोप नहीं है, बल्कि वह शक्ति है जो जीवन की उलझनें सुलझाती हुई सब सुख प्रदान करती हैं। इसी कामधेनु और ब्रम्हास्त्र को पाकर ऋषियों ने वह बल प्राप्त किया था, जिसके आगे चक्रवती सम्राट नतमस्तक होते थे।

इसके अतिरिक्त गायत्री मंत्र आयु बढ़ाने की अद्‌भुत क्षमता रखता है। शरीर विज्ञान के अनुसार मनुष्य 1 मिनिट में 15 श्वासें लेता है, किंतु वही मनुष्य जब गायत्री जप करता है, तो उसकी श्वासें 1 मिनिट में सात या आठ रह जाती है अर्थात् सात श्वासों में कमी हुई। वैज्ञानिक मानते है कि, जो प्राणी जितनी कम सांसे लेता है, वह उतना ही दीर्घजीवी होता है। इस तरह गायत्री साधक नियमित जप के माध्यम से दीर्घायु प्राप्त करता है। यह शक्ति अन्य मंत्रों में अपेक्षाकृत कम पाई जाती है।

महर्षि व्यास कहते हैं कि, जिस तरह पुष्प का सार शहद, दूध का सार घृत है, उसी प्रकार समस्त वेदों का सार गायत्री है। ''गायत्री के संबंध में महात्मा गांधी का कथन है – गायत्री मंत्र का निरंतर जप रोगियों को अच्छा करने और आत्माओं की उन्नति के लिये उपयोगी है।'' मदन मोहन मालवीय ने कहा था – ऋषियों ने जो अमूल्य रत्न हमें दिये हैं, उनमें से एक अनुपम रत्न गायत्री है। इस प्रकार गायत्री मंत्र साधना कोई अंधविश्वास नहीं एक ठोस वैज्ञानिक कार्य है।

इस तरह गायत्री मंत्र ठोस विज्ञान पर आधारित एक सार्वभौम मंत्र है। गायत्री मंजरी में कहा गया है –

''भूलोक स्वास्थ्य गायत्री कामधेनु गंता वुधेः ।
लोक आश्रायणे नामं सर्व मेरा धिगच्छति।।

अर्थात् विद्वानों ने गायत्री को भूलोक की कामधेनु कहा है, इसका आश्रय लेकर हम सब कुछ प्राप्त कर सकते हैं। गायत्री का इष्ट रुप में वरण सर्वोत्तम है।

डॉ. श्रीमति कुसुम गुप्ता,
21, गायत्री नगर, ग्वालियर

♦ ♦ ♦ ♦ ♦